मुकदमा चलाने की अनुमति

drishtiias.com/hindi/printpdf/sanction-to-prosecute

पृष्ठभूमि

भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम (Prevention of Corruption Act), 1988 की धारा 19 के अंतर्गत एक लोक सेवक पर अभियोग चलाने संबंधी प्रतिबंधों (Sanctions) की पूर्व स्तिथियों के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय के परस्पर विरोधी विचारों ने एक कानूनी बवंडर की स्थिति उत्पन्न कर दी है, जिसका नीति ज्ञानहीन लोक सेवकों (Unscrupulous Public Servants) द्वारा आपराधिक जाँच को दबाने के लिये आसानी से इस्तेमाल किया जा सकता है|

प्रमुख बिंदु

- वस्तुतः कार्यपालिका द्वारा प्रदत्त आपराधिक जाँच की स्वतंत्रता, एक आपराधिक न्यायिक संरचना (A Criminal Justice System) की सफलता के लिये एक अनिवार्य शर्त है|
- दरअसल, भ्रष्टाचार के उन मामलों में भी इसका बहुत अधिक महत्त्व प्रतीत होता है जहाँ उस लोक सेवक के विरुद्ध आरोप लगाए जाते हैं, जो न केवल कार्यपालिका का एक भाग होता है बल्कि जिसका पुलिस व्यवस्था पर पूरा नियंत्रण भी होता है|
- भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम की धारा 19 के अनुसार, कोई भी न्यायालय उन अपराधों का संज्ञान (Cognizance) नहीं ले सकता है, जो तथाकथित रूप से किसी लोक सेवक द्वारा (पूर्व प्रतिबंधों के अतिरिक्त) किये गए हों|
- वस्तुतः इस प्रावधान का उद्देश्य दो प्रतिस्पर्द्धी हितों को संतुलित करना है| इनमें से पहला एक ऐसी आवश्यकता को सुनिश्चित करना है जिसके तहत किसी लोक सेवक का कार्य-निष्पादन छोटी-छोटी शिकायतों के माध्यम से प्रभावित होने से बच सके|
- दूसरा, अक्सर यह देखने को मिलता है कि अपराध संबंधी आरोपों के विषय में होने वाली जाँच को एक लोक सेवक द्वारा अपनी शक्ति एवं पद के प्रयोग द्वारा निम्न स्तर पर ही दबा दिया जाता है|
- गौरतलब है कि अधिनियम की धारा-19, लोक सेवकों द्वारा किये गए अपराध का संज्ञान लेने के संबंध में न्यायालयों पर तब तक रोक लगाती है, जब तब कि उक्त प्रतिबंधों को सरकार द्वारा अधिरोपित किया गया है|
- न्यायालय के विरुद्ध यह रोक वस्तुतः न्यायिक जाँच के प्रयोजनों (Purposes of Trial) को संज्ञान में लेने के लिये लगाई गई है|
- हालाँकि, किसी आपराधिक मामलें में एफआईआर दर्ज कराने अथवा सीआरपीसी (Criminal Procedure Code - CrPC) की धारा 156(3) के अंतर्गत न्यायालय द्वारा जाँच आरम्भ करने के संबंध में कोई रोक नही लगाई है|
- हालाँकि, अनिल कुमार बनाम एम.के. अयप्पा (2013) (10 SCC 705) मामले में दो न्यायाधीशों की खंडपीठ द्वारा यह पाया गया कि इस विषय पर कानून अस्थिर (Unsettled) है|
- न्यायालय द्वारा यह पाया गया कि भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम (Prevention of Corruption Act), 1988 की धारा 19 निम्न स्तरों पर भी लागू होती है, साथ ही, जाँच हेतु सीआरपीसी की धारा 156(3) के अंतर्गत किया गया

कोई भी आवेदन किसी सक्षम अधिकारी (Competent Authority) की पूर्व सहमति प्राप्त किये बिना संधार्य (Maintainable) नहीं हो सकता है|

- ध्यातव्य है कि हाल ही में इसी बात का अनुसरण सर्वोच्च न्यायालय द्वारा एल. नारायण स्वामी बनाम राज्य (2016) 9 SCC 598 मामले के अंतर्गत भी किया गया है|
- यद्यपि अयप्पा और नारायण स्वामी मामले में लिये गए निर्णयों से यह निष्कर्ष निकलकर सामने आया कि बिना किसी प्रतिबन्ध के सीआरपीसी की धारा 156(3) के अंतर्गत जाँच प्रक्रिया प्रारंभ नहीं की जा सकती है, तथापि सर्वोच्च न्यायालय की खंडपीठ ने इसके विपरीत दृष्टिकोण अपनाया|
- आर.आर. चारी बनाम राज्य (R.R. Chari vs. State 1951 SCR 312) मामले में न्यायालय द्वारा यह पाया गया कि सीआरपीसी की धारा 156(3) के अंतर्गत किसी जाँच का आदेश देने के लिये प्रतिबन्ध की कोई आवश्यकता नहीं है|
- राजस्थान राज्य बनाम राज कुमार (1998)6 SSC 551, मामले में न्यायालय द्वारा यह निर्णय लिया गया कि सीआरपीसी की धारा 173 के तहत चार्जशीट दाखिल करने से पूर्व प्रतिबन्ध की कोई आवश्यकता नहीं है|
- इसी कम में सुब्रमण्यम स्वामी बनाम भारत संघ (Subramanian Swami vs Union of India (2014) 8 SCC 682) मामले में सर्वोच्च न्यायालय की पाँच सदस्यीय खंडपीठ ने यह निर्णय दिया कि दिल्ली विशेष पुलिस स्थापना अधिनियम (Delhi Special Police Establishment Act) की धारा 6a एक असंवैधानिक धारा है| इस धारा के अनुसार, उच्च पदों पर नियुक्त लोक सेवकों द्वारा किये जाने वाले अपराधों की जाँचच से पूर्व प्रतिबन्ध आवश्यक है|
- साथ ही, यह भी पाया गया कि जाँच किसी भी आपराधिक न्यायिक संरचना का केंद्रबिंदु होती है तथा इसे निम्न स्तर पर पुलिस पर प्रतिबन्ध लगाकर विकृत (Subverted) नहीं किया जा सकता है|
- न्यायालय द्वारा यह भी स्पष्ट किया गया कि यदि किसी लोक सेवक के विरुद्ध रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार या आपराधिक दुराचार (Criminal Misconduct) का आरोप लगा हो तो भी उसे अपराधी (Offender) के रूप में संबोधित करना अथवा वैसा व्यवहार करना प्रासंगिक नहीं है|
- और यदि इसे कानूनी स्थिति के रूप में वर्णित किया जाता है तो ऐसी स्थिति में इस बात का कोई औचित्य सिद्ध नहीं होता है कि सीआरपीसी की धारा 156(3) के अंतर्गत किसी न्यायालय को प्रतिबंध के बिना जाँच का आदेश देने से रोका जाना चाहिये|
- ध्यातव्य है कि उक्त निर्णयों के आधार पर न केवल कार्यपालिका को एक संभावित जाँच को नियंत्रित करने का अधिकार प्रदान किया जा सकता है, बल्कि एक उच्च पद पर आसीन पदाधिकारी द्वारा पुलिस पर प्रभाव बनाकर उसे एफआईआर दाखिल करने से भी रोका जा सकता है|